विश्व हिंदी साहित्य
2018

प्रधान संपादक
प्रो. विनोद कुमार मिश्र

संपादक
डॉ. माधुरी रामधारी

संपादक-मंडल
डॉ. बीरसेन जागासिंह
डॉ. देवभरत सिरतन
डॉ. संयुक्ता भुवन-रामसारा
डॉ. देविना अक्षयवर

विश्व हिंदी सचिवालय
इंडिपेंडेंस स्ट्रीट, फ़ेनिक्स, 73423
मॉरीशस

World Hindi Secretariat
Independence Street, Phoenix 73423,
Mauritius

info@vishwahindi.com
Website : www.vishwahindi.com
Phone : 00-230-6600800

सहायक संपादक
श्रीमती श्रद्धांजलि हजगैबी-बिहारी

टंकण टीम
श्रीमती विजया सरजु, श्रीमती उषा देवी आकाजिया-राम,
श्रीमती त्रिशिला आपेगाडु, सुश्री जयश्री सिबालक, सुश्री मोक्षणा नावोसा

निवेदन

'विश्व हिंदी साहित्य' में प्रकाशित रचनाओं के तथ्यों के उत्तरदायित्व रचयिताओं के ऊपर हैं।
विश्व हिंदी सचिवालय और संपादक–मंडल का तथ्यों से सहमत होना आवश्यक नहीं है।

पृष्ठ सज्जा
श्वेता चौधरी

स्टार पब्लिकेशंस प्रा. लि , ४/५ बी , आसफ अली रोड ,
नई दिल्ली ११०००२ (भारत) द्वारा प्रकाशित

गोवा से कुछ अपनी भी...

– डॉ. रवींद्रनाथ मिश्र

गोवा नैसर्गिक सुषमा से भरपूर, भारत का सुरम्य, सुस्वच्छ, सुसंस्कृत, एवं सुविदित प्रदेश है। पौराणिक मान्यताओं के अनुसार परशुराम की यह धरती अपने मंदिरों, चर्चों एवं समुद्र तटों के कारण मनमोहक है। यही कारण है कि गोवा सैलानियों का प्रमुख पर्यटक स्थल बना हुआ है। यहाँ अक्टूबर से फ़रवरी तक लाखों की संख्या में देशी –विदेशी पर्यटक आते हैं। पुर्तगालियों के लगभग साढ़े चार सौ वर्षों के शासन एवं हिंदू राजाओं द्वारा शासित, गोवा भारतीय–पाश्चात्य–मिली–जुली संस्कृति, सहबंधुत्व, सौहार्द, सद्भाव आदि की मिसाल प्रस्तुत करता है। कतिपय मायनों में पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित, गोवा भारतीय संस्कृति की समृद्ध परम्परा संजोए हुए है। आज भी गणेश चतुर्थी, तुलसी विवाह, गुड़ी पड़वा, नरकासुर आदि त्यौहार उसी रूप में मनाए जाते हैं। यहाँ कोंकणी, मराठी, अंग्रेज़ी और हिंदी भाषा बोली जाती है।

दरअसल बात चालीस साल पहले की है, जब मैं रोज़गार की तलाश में स्वजनों से विलग, महानगरी मुंबई में परिजनों से मिला। कतिपय मास बेरोज़गारी के दंश को भोगते हुए भाई–बंधुओं में श्री रमाशंकर मिश्र के सहयोग से एक कंपनी में सुपरवाइज़री की नौकरी मिली। यह स्वभावतः मुझे पसंद नहीं आई। उस समय गुज़र–बसर के लिए इसके सिवा और कोई चारा नहीं था। कुछ महीने बाद उसे छोड़कर बी. एड. करने का निश्चय किया। संयोग से मेरे रिश्तेदार, श्री शिवशंकर शुक्ल के मार्गदर्शन से गांधी शिक्षण भवन, जुहू में प्रवेश भी मिल गया। यहाँ की कक्षाएँ प्रातः नौ बजे गांधीजी की प्रार्थना के बाद दस बजे से शुरू होकर विभिन्न गतिविधियों के साथ पाँच बजे समाप्त होती थीं। कॉलेज से कुछ दूर पैदल फिर बस एवं लोकल ट्रेन से भांडुप पहुँचने तक सात बज जाते थे।

उत्तर भारतीय प्राथमिक पाठशाला भांडुप के प्रधानाध्यापक पिता तुल्य स्वर्गीय जयराम मिश्र के सहयोग से तीन ट्यूशन मिल गए। एक सुबह छः से सात और अन्य दो सायं साढ़े सात से साढ़े नौ बजे रात तक। आवास तक आते –आते दस एवं भोजन आदि की व्यवस्था में ग्यारह बज जाते थे। ट्यूशन से हमारा आर्थिक खर्च निकलने लगा। ईश्वर की कृपा से बी. एड. करने के पांच–छः महीने बाद 1979 में केंद्रीय विद्यालय, वास्को–द–गामा में टीचर की नौकरी मिल गई। उस समय अधिकांश लोग गोवा को विदेश समझते थे। बीयर–बार, डांस आदि की बातें सुनकर अजीब लगता था। अभाव भरी ज़िंदगी की पहली स्थायी नौकरी की प्रसन्नता में सब कुछ सुखद लगा। जुलाई के अंतिम सप्ताह में एक छोटा –सा सूटकेस और छतरी लेकर हीरो स्टाइल में वास्को के लिए निकल पड़ा। गोवा प्रांत की सीमा में गाड़ी प्रवेश करते ही बीयर ! बीयर !व्हिस्की ! व्हिस्की ! की आवाज़ सुनकर दंग रह गया ! मैंने सोचा कि हे भगवान! कहाँ आ गया ? पूर्वी उत्तरप्रदेश के खेड़ा गांव में जन्मा– पला– बढ़ा था, जहां शराब का नाम लेना पाप समझा जाता था। वर्ष में कभी –कभार जीप दिखाई दी जाती थी तो हम भाई –बहन पेट्रोल की गंध सूंघने के लिए भागते थे। शादी –व्याह और मेला जाने की तैयारी हफ़्ते भर पहले शुरू हो जाती थी । साबुन नहीं मिला तो रेह में कपड़ा साफ़ कर लिया । उस समय गांव में सनलाइट और लाइफ़बॉय साबुन मिलता था। पहला कपड़ा साफ़ करने के लिए तो दूसरा मल्टीपर्पज़ के काम आता था। जब कोई बंबई –कलकत्ता से आता था तो हम लोग उसे देखने के लिए दौड़ते थे। उस समय गाँव और शहर का अंतर समझ में आता था। अब 'अहा ! ग्राम्य जीवन क्या है?' कोसों दूर हो गया है।

गोवा आने के कुछ समय बाद मंदिरों में गया तो भारतीय संस्कृति की आत्मा, गिरिजाघरों में प्रभु ईसामसीह के प्रति आस्था एवं समुद्र तटों पर सागर की उत्ताल तरंगों के साथ सूर्य स्नान करते हुए विदेशी पर्यटकों के दर्शन हुए। पर्यटक अर्द्धनग्न अवस्था में रेत पर लेटे हुए दीन– दुनिया से बेखबर आराम करते थे। मुझ जैसे निपट गाँव में रहने वाले व्यक्ति के लिए सबकुछ अचंभा लगा । घर–परिवार एवं समाज के संस्कार इतने प्रबल थे कि मैंने केवल मंदिरों को देखा, जोकि आज की चकाचौंध संस्कृति में पिछड़ापन

माना जाएगा। यहाँ अन्य प्रसंगों को छोड़ रहा हूँ।

20 जून 1990 को गोवा विश्वविद्यालय में प्रवक्ता के पद पर हमारी नियुक्ति हुई। तत्पश्चात रीडर, प्रोफ़ेसर एवं अध्यक्ष तथा अधिष्ठाता, भाषा एवं साहित्य संकाय के पद पर कार्य किया। सम्प्रति भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद्, नई दिल्ली के सौजन्य से अप्रैल 2016 में अतिथि आचार्य हिंदी, इंडोलॉजी विभाग, जाग्रेब विश्वविद्यालय, क्रोएशिया में आ गया।

आज से सोलह साल पहले, 2001 में कतिपय विज्ञान के प्राध्यापक इग्लैंड और अमेरिका से अपनी फेलोशिप समाप्त कर गोवा विश्वविद्यालय आए। मेरे ही आवासीय परिसर में ये लोग भी रहते थे। शाम को हम लोग एकत्र होकर आपसी संवाद करते तो उनमें अहं भाव झलकता था। स्वयं को विशिष्ट कोटि में समझते थे। मैं हीनताबोध से ग्रसित होकर विदेश जाने का सपना देखने लगा। फिर मैंने सोचा, 'अरे ! क्या हिंदी प्राध्यापक के लिए संभव होगा?' यह विकट प्रश्न मेरे सामने 'टेढ़ी खीर' की तरह खड़ा हो जाता। 'हिम्मत न हारिए, बिसारिए न राम को' का मंत्र जाप करके यू .जी.सी. की वेबसाइट पर विदेश गमन का परिपत्र खंगालने लगा। इंडो इटैलियन कल्चरल एक्सचेंज प्रोग्राम का परिपत्र मिला। उसमें शर्त यह थी कि आवेदन के साथ रोम विश्वविद्यालय का प्लेसमेंट लेटर संलग्न होना चाहिए। यह दूसरी समस्या मुँह बाए खड़ी हो गई। एक हफ़्ते यहाँ –वहाँ सर पटकता रहा, लेकिन कुछ भी हाथ नहीं लगा।

एक दिन सायं 5 बजे घर पर बैठा प्लेसमेंट लेटर के विषय में सोच ही रहा था कि वॉचमैन ने घंटी बजाई। मैंने कहा "कौन?" " सर ! नीचे कोई आपको ढूढ़ रहा है। " बाहर आकर देखा तो धवल धोती –कुरता की पोशाक में मंझली कद–काठी, श्याम वर्ण का अधेड़ आदमी खड़ा है। मैंने प्रणाम किया। " मिश्रजी ! आप मुझे नहीं पहचान रहे हैं ? मैं सेवा निवृत्त प्रो. तोमर सिंह शांतिनिकेतन विश्वविद्यालय कलकत्ता से गोवा भ्रमण के लिए आया हूँ। आपके विषय में किसी ने चर्चा की तो सोचा कि मुलाकात कर लूँ। " मैंने कहा " यह तो मेरा सौभाग्य है।"

श्रीमतीजी ने मेरी परेशानी को समझते हुए चाय और अल्पाहार की अच्छी व्यवस्था की। चाय–पान के साथ –साथ औपचारिक बातचीत का सिलसिला शुरू हुआ । उन्होंने बताया कि 'मैंने हिंदी का अध्यापन करते हुए शैक्षणिक कार्यक्रमों के अंतर्गत कई देशों की यात्राएं भी की हैं। चर्चा के दौरान इटली का प्रसंग भी आया। उस समय मेरी स्थति 'परम रंक जनु पारसु पावा' जैसी हो गई।' बाबा तुलसी की पंक्तियाँ जीवन के हर मोड़ पर सहारा देती हैं। अंदर ही अंदर मंथन शुरू हो गया। फिर सोचा कि 'रहिमन निज मन की व्यथा, मन ही राख्यो गोय। सुनि इठलैहैं लोग सब बांटी न लैंहै कोय।।' क्या यहाँ निजी स्वार्थ की बात करना उचित होगा ? नकारात्मक उत्तर से बड़ी अवमानना होगी। अवसर चूक जाने की चिंता भी सताने लगी । जब से उन्होंने इटली यात्रा की बात की, तब से मैं काफ़ी विनम्र हो गया था। मेरे आवभगत की भावना में वृद्धि हो गई । फिर क्या था कि बाबा तुलसी की तरह समय देख कर मैंने अर्ज़ी पेश कर दी। मेरा ध्यान उनके मुखमंडल पर केंद्रित हो गया। उन्होंने कहा " इसमें क्या बात है ? रोम विश्वविद्यालय के प्रोफ़ेसर मिलांनेती मेरे मित्र हैं। मैं उनको मेल कर देता हूँ। आप चिंता न करें । निमंत्रण –पत्र मिल जाएगा।' फिर तो मैं उनका मुरीद हो गया। मेरे लिए तो उनकी कीर्ति सार्थक साबित हुई। बाबा याद आए' कीरति, भनिति भूति भलि सोई। सुरसरि सम सब कहं हित होई।।" 'मृत्युंजय' उपन्यास में कवच और कुंडल दान देने के प्रसंग में कर्ण कहता है –" कीर्तिहीन मनुष्य जीवित होते हुए भी मृतवत ही होता है। कीर्तिवान के लिए ही स्वर्ग के द्वार खुलते हैं। कीर्ति मनुष्य को स्मृति के रूप में अमर जीवन देने वाली दूसरी माता होती है। कीर्तिहीन जीवन जीवनमृत का जीवन होता है।" (524–527) प्रो. तोमर की कीर्ति के प्रभाव से पंद्रह दिन के अंदर प्रोफ़ेसर मिलांनेती का पत्र मिल गया।

मैंने तुरंत गोवा विश्वविद्यालय द्वारा इंडो इटैलियन कल्चरल एक्सचेंज कार्यक्रम के अंतर्गत विश्वविद्यालय अनुदान आयोग , नई दिल्ली को आवेदन भेज दिया। लगभग एक महीने बाद आयोग की स्वीकृति इस शर्त पर मिली कि गोवा विश्वविद्यालय को पहले सारा खर्च वहन करना पड़ेगा। तत्पश्चात यू.जी. सी. द्वारा भुगतान किया जाएगा। इस संदर्भ में वित्त विभाग का नकारात्मक रुख रहा। मुझे लगा कि अब जाना संभव नहीं होगा, लेकिन मैं तत्कालीन कुलगुरु प्रोफ़ेसर बी. एस. सोंधेजी की सदाशयता के प्रति नतमस्तक हूँ, जिनकी कृपा से सारी समस्याओं का समाधान हो गया। यू.जी. सी. के अधिकारियों एवं कर्मचारियों की भी कृपा रही। विभाग प्रमुख

होने के कारण मेरे सामने कार्यालयी पत्राचार में भी अड़चनें नहीं आईं। लिपिक श्रीमती प्रार्थना का टंकण एवं पत्राचार कार्य में भरपूर सहयोग मिला। प्रो.श्रीनिवासन एवं प्रो. आई. के. पई ने हौसला अफज़ाई की। प्रो. श्रीनिवासन ने यात्रा संबंधी जानकारी देते हुए मुझे डॉलर भी मुहैया करवाया। अंततोगत्वा इटली जाने का मार्ग प्रशस्त हुआ।

जीवन में पहली बार विदेश गमन की सुखानुभूति से मन की कलियां खिल उठी थीं। फिर सोचने लगता था कि इससे यूरोपीय भाषा, साहित्य, संस्कृति एवं परिवेश की जानकारी भी होगी। कालांतर में माता –पिता , पत्नी, छोटे –छोटे बच्चों, बंधु–बाँधवों, इष्ट मित्रों आदि के विछोह से मन भारी हो जाता। खुदा न ख़ासता यदि कहीं कुछ हो गया तो छोटे –छोटे बच्चों का क्या होगा ? दरअसल ऐसे समय मन की चंचलता में भावों और विचारों की कड़ियाँ टूटती –बनती हैं। मैंने भावनात्मक आवेग को वैचारिक विवेक से नियंत्रित किया।

1 जून 2001 को गोवा से मुंबई तक का सफ़र रेल द्वारा किया। लगभग रात के 12 बजे अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डे पर पहुँच गया। थोड़ी देर तक इधर –उधर भौंचक्का होकर देखता रहा, फिर एयर इंडिया का बोर्ड देखकर अंदर घुस गया। संगणक पर सारी जानकारियाँ आ रही थीं फिर भी मन की तसल्ली के लिए एक कर्मचारी से पूछा तो उसने बताया कि " आपकी फ्लाइट सुबह 5 बजकर 50 मिनट पर है। आप चिंता न करें। लगभग 3 बजे से आपको अपनी यात्रा की सारी औपचारिकताएं पूरी करनी होगी।" फिर प्रतीक्षालय में सोते –जागते तीन बजते ही बोर्डिंग पास के लिए कतार में खड़ा हो गया। सारी कागज़ी कार्रवाई पूरी होने के बाद गेट नं. 19 पर गया जहाँ से हवाई जहाज़ को उड़ान भरना था।

विमान परिचारिका के निर्देशानुसार मैं अपनी सीट पर बैठ गया। विमान समयानुसार दिल्ली के लिए रवाना हुआ। रात जागरण का परिणाम यह रहा कि पलक झपकते ही दिल्ली पहुँच गया। फिर वहां से एक घंटे बाद विमान पेरिस के लिए उड़ा। खिड़की से देखा तो विमान सहज गति से उड़ रहा था। वायुमंडल का अद्‌भुत दृश्य और उसमें छोटे –छोटे घनशावक अपने माता–पिता विशाल जलधरों की गोद में बैठ रहे थे। दूसरी तरफ़ देखा तो जैसे सफ़ेद बादलों का वितान टंगा हुआ था। विमान में समय –समय पर परिचारिकाएं खाद्य एवं पेय पदार्थों का वितरण भी मुस्कान के साथ बड़ी तहज़ीब सें कर रही थीं। मनोरंजन के लिए पिक्चर देखने और पत्र –पत्रिकाओं को पढ़ने की भी सुविधा थी।

वायुयान की उड़ान के साथ मन भी अतीत और वर्तमान के बीच उड़ान भर रहा था। 'मृत्युंजय' उपन्यास में दुर्योधन कहता है कि " मन ! केवल दो अक्षरों में कितने महान रहस्य छिपे हुए हैं। सचमुच यह मन क्या है ? संसार का प्रत्येक व्यक्ति मनोभावनाओं की असंख्य रज्जुओं से जकड़ा हुआ एक हाथी नहीं है क्या ? जहां का तहां निरंतर हिलता रहनेवाला ! व्याकुल ! फिर भी अपने –आपको स्वतंत्र और सामर्थ्यवान समझने वाला। जिसको मन कहते हैं, वह भी क्या है ? एक केकड़ा नहीं है क्या, जिसकी असंख्य भावनाओं के डंक होते हैं। " (२०८) मनुष्य जब अकेले में चिंतन करता है, तो उसके मन में नाना प्रकार के विचारों का सिलसिला सतत् चलता रहता है। जिसमें सुखद और दुखद अनुभूतियाँ होती हैं। जीवन के कुछ ऐसे प्रसंग होते हैं, जिन पर वह विचार करके स्वयं निर्णय लेता है कि उसे क्या करना है। कुछ ऐसी भी स्मृतियाँ होती हैं, जिन्हें वह दूसरों से शेयर नहीं करना चाहता। कभी–कभी साहित्य में भी जीवन की अनुभूतियाँ छनकर आती हैं।

चूंकि मेरा अतीत अभावों एवं संघर्षों के बीच बड़ी जद्दोजहद से गुजरा था इसलिए एक सुखद अनुभूति हो रही थी। फिर भी अतीत कहाँ पीछा छोड़ता है ? 'दुख ही जीवन की कथा रही, क्या कहूँ, आज जो नहीं कही' पंक्ति बार–बार दुहराने के बाद 'दुःख की पिछली रजनी बीच, विकसता सुख का नवल प्रभात' गुनगुनाकर मन को संतोष मिलता । इस प्रकार गुनते –धुनते पेरिस हवाई अड्डे पर पहुँच गया। यहाँ तीन –चार घंटे का विश्राम था। एक –दो घंटे बाहर जाकर पेरिस शहर देखने की लालसा बलवती होने लगी, लेकिन भय के कारण नहीं गया। अंदर ही इधर –उधर घूमता रहा। विमान एक के बाद एक ऐसे उड़ रहे थे, जैसे कि पक्षी उड़ रहे हों। कविवर केदार नाथ सिंह की 'मातृभाषा' कविता की 'जैसे लौटते हैं वायुयान एक के बाद एक आकाश में डैने फैलाए हवाई अड्डे की ओर' पंक्ति तरोताज़ा हो उठी। पेरिस हवाई अड्डे पर एक भारतीय समूह दिखाई दिया। उनकी भाषा गुजराती और राजस्थानी थी।

एयर पोर्ट पर एक बड़ा–सा हाल था ,जहां पुरुष और महिलाएं एक साथ सिगरेट पी रहे थे। इधर –उधर घूमते –घामते पेरिस से रोम के विमान का समय हो गया। रोम वाले विमान की स्वच्छता एवं उच्चस्तरीय व्यवस्था और साथ ही सजे–धजे गौरांग पुरुष–महिलाओं के बीच हीनता का बोध हुआ।

विमान उड़ने के कुछ समय बाद परिचारिका ने पूछा " आर. यू वेजिटेरियन?" मैंने कहा " यस। " उसने फिर पूछा " विथ वाइन?" मेरे मुंह से निकल गया "यस ". मैंने सोचा थोड़ा पी के देखते हैं कि कैसी होती है ? यहाँ कौन देख रहा है ? लेकिन अंदर ही अंदर घबराहट होने लगी। मन कुलांचें भरने लगा। संस्कार दबाने लगा। गोवा में यदि इष्ट –मित्र पूछ बैठे तो क्या जवाब दूँगा ? झूठ बोलने से अंदर की आत्मा धिक्कारेगी ! बाहर तो सबसे आँखें छुपाई जा सकती हैं, लेकिन अंदर की आँखों का क्या होगा? गोवा में मेरे मित्र प्रो. वी. पी. कामत, प्रो. महेंद्र , प्रो. जनार्दनम एवं अन्य मित्रगण मुझे पंडित कहकर पुकारते हैं। उनसे क्या कहूंगा? इसी कशमकश के बीच पास वाली सीट पर बैठे सज्जन से पूछा "दिस वाइन इज अल्कोहलिक?" उन्होंने कहा "यस।". यह दूसरी मुसीबत खड़ी हो गई। फिर यह सोचकर बोतल वापस कर दी, कि कहीं पहली बार पीने से नशा आ गया तो 'आ बैल मुझे मार' वाली स्थिति हो जाएगी। 'मृत्युंजय' उपन्यास में भीष्म पितामह कुरू वंश का परिचय देते हुए छठे पांडव का उल्लेख करते हैं, लेकिन उसका राज़ नहीं खोलते। कर्ण तो बचपन से ही अपने जन्म को लेकर परेशान था। वह अश्वत्थामा से पूछता है "वह छठां पांडव का जीवन कैसा होगा ?" अश्वत्थामा कहता है –" जिस वातावरण में वह पला होगा, वही उसका जीवन होगा। क्योंकि संस्कार ही जीवन है। फूलों के परागदंड में छिपा हुआ कृमि भी सत्संगति से देवमूर्ति पर चढ़ाया जाता है। "(४१३) जीवन के प्रबल संस्कार दुर्गुणों को फटकने नहीं देते।

मैं लगभग बारह बजे रात रोम हवाई अड्डे पर पहुँच गया। प्रोफ़ेसर मिलांनेती से हुई पूर्व बातचीत के अनुसार मैं उनके हाथ में हिंदी पत्रिका देखकर पहचान गया। वे अपनी कार से मुझे रोम हवाई अड्डे से आवासीय व्यवस्था तक ले गए। रास्ते में रोम के रहन–सहन एवं खान–पान के अलावा हिंदी भाषा और साहित्य के विषय में बातचीत होती रही। रात के लगभग एक बज रहे थे । आतिथ्य सत्कार की गरिमा का पूर्ण निर्वाह करते हुए वे दूसरे दिन के खर्च हेतु कुछ लीरा देकर चले गए।

रविवार 3 जून 2001 रोम का पहला दिन था। सुबह नाश्ते के बाद कामता प्रसाद गुरू की 'हिंदी व्याकरण' पुस्तक पढ़ रहा था कि इसी बीच किसी ने दरवाज़ें पर दस्तक दी। मैं समझ गया कि प्रो. मिलांनेती के कथनानुसार श्रीमती आना (शोध छात्रा रोम विश्वविद्यालय) ही होंगी। दरवाज़ा खोलते ही आना ने कहा " प्रो. मिलांनेती ने आपको रोम के कुछ महत्वपूर्ण पर्यटक स्थलों को दिखाने के लिए भेजा है।" मैंने उनके प्रति शुक्रिया व्यक्त की। तत्पश्चात् आपसी परिचय के बाद हम दोनों रोम की यात्रा पर निकल पड़े। वे मुझे कतिपय हरीतिमा एवं पुष्पों से सुशोभित उद्यानों एवं झरनों को दिखाती हुई रोम के एक ऐसे ऐतिहासिक स्थल पर ले गईं, जहां देश की आज़ादी के लिए बहादुर सैनिकों ने अपने प्राणों की आहुति दी थी। पत्थर की शिलाओं पर राजाओं और महाराजाओं का परिचय एवं योगदान का विवरण इतालवी भाषा में लिखा था। आना ने मुझे कतिपय की जानकारी दी।

इसके बाद अन्य पर्यटक स्थल देखने के लिए कुछ दूर आगे गाइड के साथ पर्यटकों का एक झुंड दिखाई दिया। उस स्थल की कुछ जानकारियां गाइड से मिलीं। मैं आना के साथ हिंदी में बात कर रहा था, जिसे सुनकर एक बांग्लादेशी व्यापारी दौड़ता हुआ आया और मारे खुशी के " हम तुम मिले प्यार से....." गीत गाने लगा। मैंने उससे पूछा, " यह कोक कितने का है ?" उसने कहा " मैं इसे 6000 लीरा में बेचता हूँ, लेकिन आप हमारे पड़ोसी देश के हैं ,इसलिए 1000 में दूंगा। " मैं पड़ोसी देश भारत के प्रति उसके भावोद्गार से बहुत प्रभावित हुआ और सोचने लगा कि काश ! यही प्रेम अन्य पड़ोसी देशों में हो जाता तो सारी समस्याओं का निदान स्वयं सिद्ध हो जाता। उसके आत्मीय भाव को देखकर हम दोनों ने कोक लिया।

शाम के सात बज रहे थे। आना को घर जल्दी जाना था , इसलिए वे चली गईं। मैंने रास्ते में जगह –जगह रेस्टोरेंटों के अंदर और बाहर सिगरेटों पीते हुए स्त्री –पुरुषों को मस्ती में मदिरा–पान करते हुए देखा।

रोम का पहला दिन था। उत्सुकता और कौतूहलता से भरा होने के कारण मुझे सबकुछ 'लागे नया–नया' का भान हो रहा था।

आवास से रेलवे स्टेशन करीब था। शाम को भ्रमण की इच्छा से स्टेशन की ओर निकल गया। रास्ते में साफ़–सफ़ाई की अच्छी व्यवस्था देखकर मन प्रमुदित हो गया। बस के चालक अच्छी पोशाक में टाई लगाए हुए बस चलाने के साथ –साथ टिकट भी दे रहे थे। प्रत्येक बस स्टॉप पर बुक स्टॉलों में भी टिकट की व्यवस्था थी। बस का दरवाज़ा एक बार बंद होने के बाद अगले स्टॉप पर निर्धारित समय पर पहुँचने पर ही खुलता था। यहाँ मुझे फैज़ाबाद से लखनऊ की बस यात्रा की याद आई– का हो यादवजी ! चलबा नाय। अरे ! राजू टयमिया होई गईल बा। का पंडितजी ! अकतायल बाटा, चलत हई न। अच्छा ! तू चाय पी लेया। हम चलत हई। चला हो सभे ! तनी रूका रहां , एक जनी पिशाब करै गयल हयन। अरे ! सुनत हया हो ! जल्दी आवा बसा छूटत बा ! तनी रोके रहा आवत हई। कंडकटर साहब, ई समानवा ऊपरा लाद देई। बाराबंकी में उतार लेब।

फिर मैंने गोवा की बस यात्रा के बारे में सोचा।" राव ! राव ! वेगिन कर, पुढे चल ! पुढे चल ! फाटी ! फाटी ! वछ ! वछ। टिकट कड़े मका मोड़ जाय। तू खई वइता ? हांव वास्को वइता। राव ! तूकां टिकट दिता। घाईं करू नका। मोड़ मागिर दीता।" गोवा की बसें सामान्यतः समय पर चलती हैं। यहाँ बसों के ऊपर सामान लादने का चलन नहीं है।

टर्मिनी स्टेशन के सामने बड़े –बड़े शोरूम थे जिनमें प्रवेश करते हुए संकोच हो रहा था। हिम्मत करके एक शोरूम में गया। शर्ट की कीमत दो लाख, कोट की दस लाख और जूते की सत्तर हज़ार लीरा देखकर हमारे होश उड़ गए। फिर वहां से रोम शहर की चमक –दमक देखते हुए आवास के पास भोजन के लिए एक रेस्टोरेंट में गया। कुर्सी पर बैठते ही एक भद्र महिला ने इटैलियन में खाने के बारे में पूछा तो मैंने कहा " आई डोंट नो इटैलियन लैंग्वेज।" उसने मेरी बात पर ध्यान ही नहीं दिया। उसी समय एक सज्जन आए जोकि थोड़ी अंग्रेज़ी समझते थे। मैंने उनसे कहा " आई वांट वेजीटेरियन फूड।" उन्होंने कहा " हीयर यू विल गेट ओनली वेज पिज्जा।" महिला ने पीने के लिए विभिन्न मदिरा के नाम लिए तो मैंने कहा " ए ग्लॉस ऑफ वाटर।" वे लोग हँसने लगे।

दूसरे दिन सुबह नौ बजे मकान मालकिन सिगरेट की पीते हुए नाश्ता लेकर आईं और बोली कि " प्लीज गेट रेडी प्रोफ़ेसर मिलांनेती विल कम टेन ओ क्लॉक" मैंने कहा " ओ.के. मैडम ! " नाश्ते में टोस्ट ,जाम , बटर , दूध और चाय थी। नाश्ता करने के बाद कुछ देर पढ़ता –लिखता रहा। ठीक ! दस बजे प्रोफ़ेसर आ गए। उन्होंने मुझसे हालचाल पूछा फिर हम दोनों आपस में बातचीत करते हुए रोम विश्वविद्यालय गए। प्रो. ने विभागीय सदस्यों से हमारा परिचय कराया। तत्पश्चात कमरे की कुंजी देकर कहीं चले गए। मैंने सबसे पहले बुकशेल्फ़ में रखी किताबों का निरीक्षण किया। हिंदी किताबों का संग्रह देखकर सुखद अनुभव हुआ।

कुछ देर बाद एक लंबे कद की सुडौल, सुंदर एवं खूबसूरत लड़की आई और बोली "मेरा नाम अगलाया है। मैं हिंदी विभाग की छात्रा हूँ। प्रो. ने मुझे आपको रोम शहर दिखाने के लिए भेजा है। " उसकी अधकचरी अंग्रेज़ी मिश्रित हिंदी सुनकर अच्छा लगा। उसने मुझे रोम की प्रसिद्ध नदी 'तिवेरे' के पास बाग –बगीचों, संग्रहालयों और ऐतिहासिक स्थलों को दिखाया ।

अगलाया के जाने के बाद श्री जयप्रकाश भारद्वाजजी आए । उन्होंने अपना परिचय देते हुए बताया कि "मैं मूलतः राजस्थान का रहने वाला हूँ। मेरी शिक्षा –दीक्षा दिल्ली में हुई। कल जो आपको घुमाने ले गई थीं वह मेरी पत्नी आना थीं।" रात के नौ बजे तक हम दोनों साथ –साथ घूमते रहे, फिर मिलने का वादा करते हुए एक दूसरे से जुदा हो गए।

उस समय मुझे सब कुछ अजूबा लग रहा था क्योंकि आज से सोलह साल पहले गोवा में मुझे ऐसे सुपर मार्केट और मॉल देखने को नहीं मिले थे। रोम में आए हुए चार दिन हो गए थे । यहाँ की आबोहवा , आवागमन , रहन–सहन आदि की थोड़ी –बहुत जानकारी हो गई थी। 5 जून को सुबह 'गंगा मैया' उपन्यास के कतिपय अंश पढ़ने के बाद वेटिकन चर्च देखने निकल पड़ा। बस में एक बुज़ुर्ग महिला ने टूटी –फूटी अंग्रेज़ी में बताया कि" यहाँ पहले चर्च के पोप लोग ही शासन करते थे। उन्होंने मुसोलिनी के निरंकुश शासन के विषय में बताना शुरू ही किया था कि बस स्टॉप आ गया। वेटिकन चर्च की वास्तुकला एवं परिसर देख कर मैं स्तब्ध रह गया। संग्रहालय में पोप द्वारा प्रयुक्त की जाने वाली वस्तुओं को देखा जोकि अपने आप में अद्भुत थीं। मुझे पोप की महत्ता के विषय में विशेष जानकारी नहीं थी इसलिए आशीर्वाद प्राप्त करने की मंशा से पोप जॉन पॉल के निवास के पास जाकर संतरियों

से मिलने की इच्छा व्यक्त की। उनमें से एक ने हरे रंग का कार्ड देते हुए कहा "आप कल आइए, सामूहिक रूप से उनके दर्शन कर सकते हैं। ऐसे नहीं मिल सकते। " कुछ समय वहाँ विश्राम करने के बाद विभाग आ गया। प्रो. मिलांनेती का कमरा बंद था, इसलिए पास की कक्षा में बैठकर 'गंगा मैया' का अधूरा भाग पढ़ गया।

मैंने साढे– छः बजे तक मिलांनेती की प्रतीक्षा की । जब वे नहीं आए तो सोचा कि विश्वविद्यालय परिसर का भ्रमण कर लूँ। शाम को भारद्वाज द्वारा बताए गए इंडियन रेस्टोरेंट में जाकर तंदूरी रोटी, आलू मटर की सब्ज़ी और पुलाव भरपेट खाया और फिर कमरे पर आकर सो गया तो सुबह ही उठा।

रोज़ की भांति 6 जून की भी दिनचर्या शुरू हुई। मुझे दैनिक भत्ता हेतु विदेश मंत्रालय जाना था। प्रो. मिलांनेती ठीक दस बजे आ गए। मैंने प्रो. से विभागीय व्याख्यान के विषय में निवेदन किया कि " आप हमारा प्रतिदिन एक या दो व्याख्यान रख दीजिए ताकि अध्यापन और भ्रमण दोनों कार्य साथ –साथ होता रहे।" उन्होंने पूछा कि " आपके व्याख्यान का विषय क्या होगा ?" मैंने कहा " अच्छा होगा कि सबसे पहले भारत के सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन पर संक्षिप्त रूप से प्रकाश डालते हुए 'भाषा और साहित्य' तत्पश्चात् हिंदी साहित्येतिहास के विकास एवं उसकी प्रमुख प्रवृत्तियों का ज़िक्र करूँ ।" प्रो. ने कहा " ठीक है जैसा आप उचित समझें। विद्यार्थियों से बहुत सरल हिंदी एवं अंग्रेज़ी में बात कीजिएगा। " हम दोनों बातचीत करते हुए मंत्रालय पहुँच गए। प्रकृति के सुरम्य अंचल में बनी छः मंज़िलों की भव्य इमारत देखकर मैं चकित रह गया। प्रोफ़ेसर ने बताया कि " इस इमारत के सम्पूर्ण वरांदे की दूरी 18 कि.मी. है, जिसमें तीन हज़ार से अधिक अधिकारी और कर्मचारी कार्य करते हैं।" विदेश मंत्री प्रो. पाओला फेलो अलेमाननी से मिलकर बहुत अच्छा लगा क्योंकि वे मृदुभाषी, हंसमुख ,सहज और बड़ी भली महिला लगीं। उन्होंने हमारा कार्य तुरंत कर दिया। जब मैंने उनके साथ फोटो के लिए निवेदन किया तो वे आनंदित हो उठीं।

इटली की राजधानी रोम के अलावा मुझे फ्लोरेंस , वेनिस , मिलान , टोंरटो आदि प्रमुख शहरों को देखना था, लेकिन समयाभाव और कुछ मितव्ययी स्वभाव के कारण एक दिन फ्लोरेंस देखने की योजना बनाई। इसके लिए टर्मनी स्टेशन पर पूछ –ताछ कर रास्ते में इटैलियन भाषा से अंग्रेज़ी में अनुदित पुस्तक खरीदी। फिर वहां से कोलोसीओ देखने चला गया। कोलोसीओ के बाहर तीन–चार व्यक्ति योद्धा की वेशभूषा में घूम रहे थे। मैंने उनके विषय में पूछा तो एक लड़की ने बताया कि " रोम साम्राज्य के सम्राट , सामंत एवं उनके परिवार के लोग कोलोसीओ की बालकनी में बैठकर उस समय इन जैसे हट्टे –कट्टे गुलामों और सिंहों के बीच युद्ध देखते थे। इस कार्यक्रम का आयोजन उनके मनोरंजन के लिए किया जाता था। यदि उनमें से किसी गुलाम की मृत्यु हो जाती थी, तो उन लोगों का दिल पसीजता नहीं था बल्कि वे आनंदित होते थे।" राजतन्त्रात्मक व्यवस्था की अमानवीयता, क्रूरता और निरंकुशता को सुनकर मेरे रोंगटे खड़े हो गए। दुःख की बात है कि 21वीं शताब्दी में भी आतंकवाद के रूप में इस प्रकार की अमानवीय घटनाएं घटित हो रही हैं। आतंकवाद विश्व के लिए एक चुनौती बन गया है।

7 जून को फ्लोरेंस जाने की योजना के अनुसार सुबह जल्दी तैयार होकर टर्मनी स्टेशन से सवा आठ की गाड़ी की बोगी में पैर रखते ही लगा कि कहीं वी.आई.पी. कोच में तो नहीं आ गया? क्योंकि अंदर की सारी व्यवस्था एवं साफ़–सफ़ाई उच्चकोटि की थी। मैंने एक यात्री से पूछा तो उन्होंने कहा " यूं आर सीटिंग प्रॉपर प्लेस" । गाड़ी चल पड़ी और कुछ ही देर में हवा से बातें करने लगी। इटली के गाँव, किसान ,खेत–खलिहान आदि देखने की 'भरा था मन में नव उत्साह ,सीख लूँ ललित कला का ज्ञान' वाला श्रद्धा का भाव था। पूरे कोच में केवल 15–20 लोग थे। मैं खिड़की वाली सीट के पास बैठ कर पहाड़ों के ऊपर बसे गाँव और उनके बीच के समतल मैदानों में लहलहाती खेती को निरख रहा था। खेतों के बीच वर्किंगसूट पहने किसान खेती के यंत्रों से कार्य कर रहे थे। इनके बीच –बीच में नदियों और झरनों के मनमोहक दृश्य दिखाई दे रहे थे। रेलवे लाइन की दोनों ओर हरीतिमा पसरी हुई थी। मुझे घास–फूस की झोंपड़ी, बाज़ार–हाट , ग्रामीण जीवन की चहल–पहल, खेत– खलिहान आदि नहीं दिखाई दिए। गाड़ी की रफ़्तार के साथ मन भी तरंगित हो रहा था। ऐसा लग रहा था कि कहीं दूसरे लोक में आ गया हूँ।

'आरनो' नदी के किनारे बसा फ्लोरेंस रोमन कला और संस्कृति का अद्भुत शहर जगह –जगह ऐतिहासिक चर्चों से शोभायमान

था। शहर के बीच में एक पुराना संग्रहालय था, जिसमें रोमन की प्राचीन धरोहर विद्यमान थी। सैलानियों के जत्थे गाइड के साथ घूम रहे थे। मुझे भी उनके द्वारा कुछ जानकारी मिल जाती थी। नदी के उस पार 'पीति पालाज' नामक उद्यान था। काफ़ी ऊंचाई पर होने के कारण मैं यहाँ से फ्लोरेंस की खूबसूरती को आँखों में भर रहा था। युवा जोड़े, परिवार के लोग और पर्यटक सब लोग इधर –उधर घूम रहे थे।

दूसरे दिन विभाग में निकोला, सीनाली, ईशा आदि विद्यार्थियों से हिंदी के विभिन्न विषयों पर बातचीत का कार्यक्रम था। सुबह नाश्ते के बाद साढ़े दस बजे विभाग पहुँच गया। हिंदी की किताबें पलट रहा था कि निकोला अपने मित्र सिसीलिया के साथ आ गया। पहली नज़र में वह मुझे सिद्ध सम्प्रदाय का औघड़ लगा, लेकिन बातचीत में बहुत विनम्र और मृदुभाषी था। गोवा विश्वविद्यालय के भाषा एवं साहित्य संकाय के अधिष्ठाता, प्रो. ओलिन्यू गोमिश ने रोम के पुस्तकालय से एक पांडुलिपि का जेरॉक्स लाने के लिए कहा था। कुछ देर विद्यार्थियों से विचार –विमर्श करने के बाद मैं निकोला के साथ उस पुस्तकालय में गया। एक कर्मचारी ने बहुत परिश्रम से पांडुलिपि की छानबीन की लेकिन वह नहीं मिली। इसके बाद हम लोग एक ऐतिहासिक स्थल पर गए, जहां निकोला ने मुझे रोम के विषय में जानकारी हेतु दो मोटी किताबें खरीद कर दीं।

9 जून को प्रातः 8 बजे मकान मालकिन ने आवाज़ दी। " हीयर इज़ योर फ़ोन कॉल।" मैंने कहा "यस मैडम ! आई एम कमिंग। "मैं सारा फ्रआ बोल रही हूँ। प्रो. मिलांनेती की छात्रा हूँ। मुझे और जूलिया को आपसे हिंदी साहित्य के विषय में बात करनी है। " मैंने कहा "स्वागत है।" विभाग पहुँचने पर दोनों वहां उपस्थित थीं। एक घंटे से अधिक हिंदी साहित्य और 'गंगा मैया' पर बातचीत हुई। संयोग से उपन्यास पढ़ गया था, इसलिए संवाद में आनंद आया। सारा और जूलिया की टूटी –फूटी अंग्रेज़ी मिश्रित हिंदी में बातचीत प्रियकर लगी। इसके बाद जूलिया मुझे स्कूटर पर बैठाकर प्रसिद्ध संग्रहालय 'गैलरिया बोर्हेस' दिखाने ले गई। इसमें 15–16वीं शताब्दी के मानव जीवन के रहन–सहन के विभिन्न अवशेष, चित्र और प्रसिद्ध पेंटरों की खूबसूरत पेंटिंग रखी हुई थीं। दीवाल पर उस समय के युद्ध के चित्र अंकित थे। उसमें एक ऐसा चित्र था जिसमें दिखाया गया था कि एक नवयुवक पास की नवयुवती से सहवास करना चाहता है, लेकिन वह तैयार नहीं होती है। पेड़ का सहारा लेते हुए उसे भगवान मानकर रक्षा के लिए पुकारते हुए स्वयं पेड़ में तब्दील हो जाती है। युवक निराश होकर लौट जाता है। 10 जून का दिन भी शैक्षणिक एवं भ्रमण की गतिविधियों में बीत गया।

पूर्वनिर्धारित कार्यक्रम के अनुसार मुझे 11 जून को श्री भारद्वाज से टीबुर टीना स्टेशन पर मिलना था। सुबह नाश्ते के बाद लगभग रोज़ एक या दो घंटे लिखता–पढ़ना था। नाश्ते में वही जाम ,ब्रेड, टोस्ट , दूध आदि खाते–खाते जी ऊब गया। दस बजे तैयार होकर भारद्वाज से मिलने निकल पड़ा। विगत कई दिनों से बहुत सारे फोटो लिए थे । उन्हें धुलवाने के लिए एक स्टूडियो में गया । स्टूडियो वाला हमारी बात को नहीं समझ रहा था तो मैंने भाषा सम्प्रेषण व्यवस्था का सहारा लेकर उसे संकेतों में समझाया । फिर जल्दी –जल्दी चलकर स्टेशन पहुँचा। दरअसल भारद्वाज को ट्यूशन जाना था और मुझे रोम का समुद्र देखना था।

हम दोनों ने एक –एक कप कैपचीनो पीकर एक दूसरी गाड़ी पकड़ी। रास्ते भर कभी इटली तो कभी भारत के विषय में बातचीत होती रही। रोम के बाहर गाँव की बस्ती में आ गए, जहां मुझे भारतीय पेड़ –पौधे , पशु–पक्षी, ताल –तलैया, खेत–खलिहान, हल्कू, जोखू, होरी–धनिया, गोबर–झुनिया, गाय–बैल, भैंस –भैंसा, छेड़ी–बकरी, मुर्गा–मुर्गी, सूअर आदि कुछ भी नज़र नहीं आए। मचिया पर बैठी हुई आँखों में सूरमा लगाए, पान खाती हुई ललाइन के लाल–लाल ओंठ और अंचरा के कोने में बंधा हुआ कुंजियों का गुच्छा भी नहीं दिखाई दिया। पान– सुर्ती खाकर पचर–पचर थूकते और बीड़ी पीते हुए लोग भी नहीं मिले। हां ! नाके –नाके पर रेस्टोरेंटों में एक हाथ में मदिरा का चषक और दूसरे में सिगरेट का कश लेते हुए अधिकांश स्त्री –पुरुष मिले। यहाँ बात–बात पर 'ग्रात्सिए' (धन्यवाद) बोलना , सहयोग की भावना के लिए उतावला होना, पदयात्री को सड़क पार करते समय कार रोक कर जाने देना आदि रोम संस्कृति का अभिन्न अंग है।

मैं गंतव्य स्टेशन पर जैसे ही पहुँचा, भारद्वाज के शिष्य ने झुककर अभिवादन किया। भारतीय गुरू के शिष्य की झलक मिली।

इसी बीच भारद्वाज भी आ गए, फिर हम लोग आपस में बातचीत करते हुए 15 मिनट के अंतर्गत उनके निवास स्थान पर पहुँच गए। अतिथि कक्ष किसी सिनेमा हॉल की तरह सजा था। 'मदर इण्डिया', 'कागज़ के फूल', "मोहब्बतें', 'कहो न प्यार है' आदि फ़िल्मों के पोस्टर लगे हुए थे। तीन –चार आलमारियां पुस्तकों और कैसटों से भरी थीं। चाय पीने के बाद वे हमारे लिए मोहब्बतें फ़िल्म लगाकर उस विद्यार्थी को पढ़ाने के लिए दूसरे कमरे में चले गए। मैंने उनके अतिथि कक्ष का फ़ोटो लिया और लगभग दो बजे मन बहलाव के लिए समुद्र देखने गया। गोवा के समुद्र तटों की नैसर्गिक सुषमा के समक्ष वह अच्छा नहीं लगा। उसी दिन मुझे भारतीय दूतावास में भारतीय राजदूत श्री सिद्धार्थ सिंह से भी मिलना था। भारद्वाज से तुरंत दुआ –सलाम कर ट्रेन से टर्मिनी स्टेशन और फिर वहां से पैदल ही भारतीय दूतावास गया। स्वागत कक्ष में मैंने राजदूत से मिलने की बात की तो पता चला कि वे बहुत व्यस्त हैं। सिक्योरिटी गार्ड ने कहा कि " आप उनके पी. ए . श्री वीरेंद्र कुमार पाल से मिल सकते हैं।" पाला जी से फ़ोन पर बात हुई थी, इसलिए नाम लेते ही वे अभिवादन और सत्कार के लिए उठ खड़े हुए। विदेश में उनका आवभगत मन को छू गया।

थोड़ी देर घर–परिवार ,शिक्षा–दीक्षा की बात हुई ,फिर वे मुझे राजदूत के पास ले गए। राजदूत श्री सिद्धार्थ सिंह ने खड़े होकर हमारा स्वागत किया। आपसी परिचय के बाद रोम विश्वविद्यालय में हिंदी की शिक्षण व्यवस्था, विद्यार्थियों की संख्या, हिंदी भाषा ज्ञान एवं साथ में गोवा के विषय में आपसी संवाद हुआ। चूंकि उनको कहीं जाना था ,इसलिए कुछ देर औपचारिक बातचीत के बाद मैंने उनसे विदा ली।

मनुष्य के संस्कार कई मायनों में जड़ होते हैं। मंगलवार के दिन मैंने यहाँ भी व्रत रखा। मकान मालकिन सिगरेट का कश लगाते हुए दूध और चाय लेकर आईं और बोली "मिस्टर मिश्रा फ़ोन कॉल फॉर यू।" प्रो. मिलांनेती का फ़ोन था। उन्होंने हालचाल पूछते हुए कहा कि "आज मैं किसी कार्य से बाहर जा रहा हूँ। कल 13 जून को दस बजे आपका पब्लिक व्याख्यान है। "कुछ देर के बाद विभाग गया। प्रो. के कमरे में बैठकर पत्रिका पढ़ रहा था कि पास में बैठी महिला प्रो. ने कहा "आर. यूं. डॉ. मिश्रा " मैंने कहा " एस मैडम।" उन्होंने कहा कि " फ़ोन कॉल फॉर यू । " श्रीमती तान्या गुप्ता बोल रही हूँ। मैं भी मूलतः भारत की रहने वाली हूँ । विगत कई वर्षों से हिंदी विभाग में पढ़ा रही हूँ। आपसे मिलना चाहती हूँ लेकिन आज घर पर बहुत ज़रूरी कार्य है , इसलिए नहीं आ सकती। कल मुलाकात होगी। " मैंने कहा " कोई बात नहीं मैडम! " तत्पश्चात् मैं अगले दिन के व्याख्यान की तैयारी में निरत हो गया।

पांच बजे भारद्वाजजी आए। उनके साथ कुछ गिफ़्ट खरीदना था। किसी भी गिफ़्ट की कीमत पंद्रह– बीस हज़ार लीरा से कम नहीं थी। हिम्मत करके थोड़ा –बहुत खरीदा। भारद्वाज थोड़ी दूर एक दीवार के पास गए और लीरा की चमकती हुई नोट लेकर आ गए। मैं सोचने लगा कि दीवार में से कैसे नोट आ गई ? लेकिन मारे संकोच के पूछा नहीं। दरअसल उस समय भारत में ए.टी.एम. का प्रचलन नहीं था। गोवा में नहीं देखा था। इसी तरह कॉफ़ी और कोल्ड ड्रिंक की मशीन को देखकर भी आश्चर्य हुआ।

13 जून को 'हिंदी भाषा एवं साहित्य' विषय पर 10:30 बजे पब्लिक व्याख्यान देना था। 12 जून की रात कशमकश में बीती क्योंकि जीवन में पहली बार अंग्रेज़ी में बोलना था। विद्यार्थियों की चिंता नहीं थी, लेकिन प्राध्यापकों के बीच में बोलने को लेकर आशंकित था। सुबह अखाड़े के पहलवान की तरह कई बार रियाज़ किया। तत्पश्चात ठीक दस बजे विभाग पहुँच गया। विद्यार्थियों को देखकर तो थोड़ी खुशी होती लेकिन जैसे ही कोई प्रोफ़ेसर सामने दिखाई पड़ता तो पसीने छूटने लगते। यहाँ तक तो गनीमत थी लेकिन प्रो. मिलांनेती ने संकाय के अधिष्ठाता (डीन) को भी आमंत्रित किया था। आप अनुमान लगा सकते हैं कि मुझ पर क्या बीत रही होगी ? मैंने भी बजरंगबली को याद किया। गोवा प्रवास के दौरान विश्वविद्यालय में प्रो. श्याम भट्ट, प्रो. मेनन, प्रो. सुदर्शन आदि के साथ अधिकतर अनौपचारिक संवाद अंग्रेज़ी में ही होता था। यहाँ उसका लाभ मिला। अन्यथा स्थिति बहुत विकट होती।

प्रो. मिलांनेती ने हमारा परिचय देने के बाद व्याख्यान के लिए आमंत्रित किया। मैंने विनम्र शब्दों में सभी लोगों का अभिवादन करते हुए कहा " विगत बारह वर्षों से मैं हिंदी का अध्ययन–अध्यापन कर रहा हूँ। मंचीय अंग्रेज़ी बोलने का पहला अवसर है। यदि कहीं कोई त्रुटि हो जाए तो आप लोग क्षमा कीजिएगा। हमारे व्याख्यान का विषय है 'हिंदी भाषा एवं साहित्य'। मैंने सर्वप्रथम माहेश्वर सूत्र का वाचन करते हुए भाषा की अवधारणा एवं स्वरूप की चर्चा की। फिर तो सभी लोग चकित होकर देखने लगे। इसके बाद स्वर ,व्यंजन और मात्रा के

प्रयोग से शब्द एवं वाक्य–निर्माण की प्रक्रिया पर प्रकाश डाला। साहित्य की परिभाषा 'सहितस्य भावः साहित्यम्' से शुरू करते हुए संस्कृत, अंग्रेज़ी एवं हिंदी के विभिन्न साहित्यकारों की साहित्य संबंधी विविध अवधारणाओं के साथ उनकी प्रासंगिकता को भी रेखांकित किया।

व्याख्यान के प्रारंभ में थोड़ी झिझक हुई, फिर तो माँ शारदे की ऐसी कृपा हुई कि मैं लगभग दो घंटे अंग्रेज़ी में धाराप्रवाह बोल गया। श्रीमती तान्या गुप्ता बीच –बीच में विद्यार्थियों की सहूलियत के लिए इटैलियन भाषा में अनुवाद करती गईं। अंत में आधे घंटे की चर्चा में विद्यार्थियों के अलावा कतिपय प्राध्यापकों ने भी प्रश्न पूछे। श्रोताओं की सकारात्मक प्रतिक्रिया से व्याख्यान पूर्व उच्च ज़्वर के तापमान का पारा नीचे आ गया। मन आनंदित हो उठा। कर्म का फल प्राप्त हुआ। प्रो. मिलांनेती किसी कार्य से बाहर चले गए। मैं पास के रेस्टोरेंट में एक कैपचीनो पीकर उनके विभागीय कमरे में दस्तावेज़ पत्रिका का अंक पढ़ते हुए वहीं सोफ़े पर सो गया।

दूसरे दिन 14 जून 2001 को 'हिंदी साहित्य का इतिहास' विषय पर बोलना था। 13 जून की शाम को व्याख्यान के विषय पर मंथन करता रहा। यह रोम विश्वविद्यालय का अंतिम व्याख्यान था। लगभग दो घंटे अंग्रेज़ी में बोलने से आत्मविश्वास बढ़ गया था। सुबह नाश्ते के बाद हिंदी साहित्य के इतिहास पर सरसरी निगाह डालकर 10.30 बजे विभाग पहुँच गया।

प्रो. मिलांनेती के आने के बाद बिना किसी औपचारिकता के मैंने सर्वप्रथम आदिकाल की प्रवृत्तियों को संक्षित रूप से रेखांकित किया। तत्पश्चात् भक्तिकाल की प्रमुख काव्यधाराओं का उल्लेख करते हुए कबीर की आध्यात्मिक एवं सामाजिक विचारधारा को 'तोको पीव मिलेंगे, घूंघट के पट खोल रे', 'मोको कहाँ ढूढ़े रे बंदे, मैं तो तेरे पास', 'संतो सहज समाधि भली', 'साधो देखो जग बौराना' आदि पदों एवं दोहों पर प्रकाश डाला। इसी क्रम में जायसी, सूर, तुलसी और मीरा की रचनाओं के द्वारा उनकी आध्यात्मिक एवं जीवन –जगत संबंधी विचारों और मान्यताओं की चर्चा की। भक्तिकाल की रचनाओं का बीच–बीच सस्वर वाचन कर मैंने व्याख्यान को प्रभावी और रुचिकर बनाने का प्रयास किया। आज तो अंग्रेज़ी बोलने में भी थोड़ी धार आ गई थी। हिंदी भाषा के प्रचार –प्रसार की दृष्टि से हिंदी –अंग्रेज़ी मिश्रित भाषा का प्रयोग करता था। हिंदी के कतिपय छात्र –छात्राओं ने बीच –बीच में अन्य लोगों को इटैलियन भाषा में भी समझाया। अंत में चर्चा के बाद व्याख्यान समाप्त हुआ। श्रोताओं के हावभाव से लगा कि उन्हें व्याख्यान अच्छा लगा। प्रो. मिलांनेती ने आभार व्यक्त किया और तत्पश्चात् हम लोग भोजन के लिए गए।

भोजन के दौरान मैथिलीशरण गुप्त के 'भारत भारती' और 'हिंदी ,हिन्दुस्तानी' भाषा पर चर्चा हुई। हिंदी साहित्य के अन्य रचनाकारों में प्रसाद की 'कामायनी', हरिऔध के 'प्रियप्रवास' एवं हज़ारीप्रसाद द्विवेदी के उपन्यास 'बाणभट्ट की आत्मकथा' का भी ज़िक्र हुआ। भोजन के बाद दो छात्राओं ने 'मैला आंचल' के संदर्भ में आंचलिकता पर बातचीत की थी।

प्रो. मिलांनेती ने व्याख्यान का प्रमाण–पत्र तैयार किया जिसे उन्होंने मुझे सम्मानपूर्वक प्रदान किया। मैंने भी उन्हें अंतःकरण से आत्मीय सहयोग के प्रति साधुवाद दिया। मेरी यात्रा के वे महत्वपूर्ण सूत्रधार थे। मुझे उसी दिन शाम को ही इटली से प्रस्थान करना था। मेरी आँखें उनके भावपूर्ण आतिथ्य–सत्कार एवं मनोवांछित सपनों को साकार करने के लिए सजल हो गईं।

क्रोएशिया, यूरोप